हमारे वैदिक देवता "सविता"

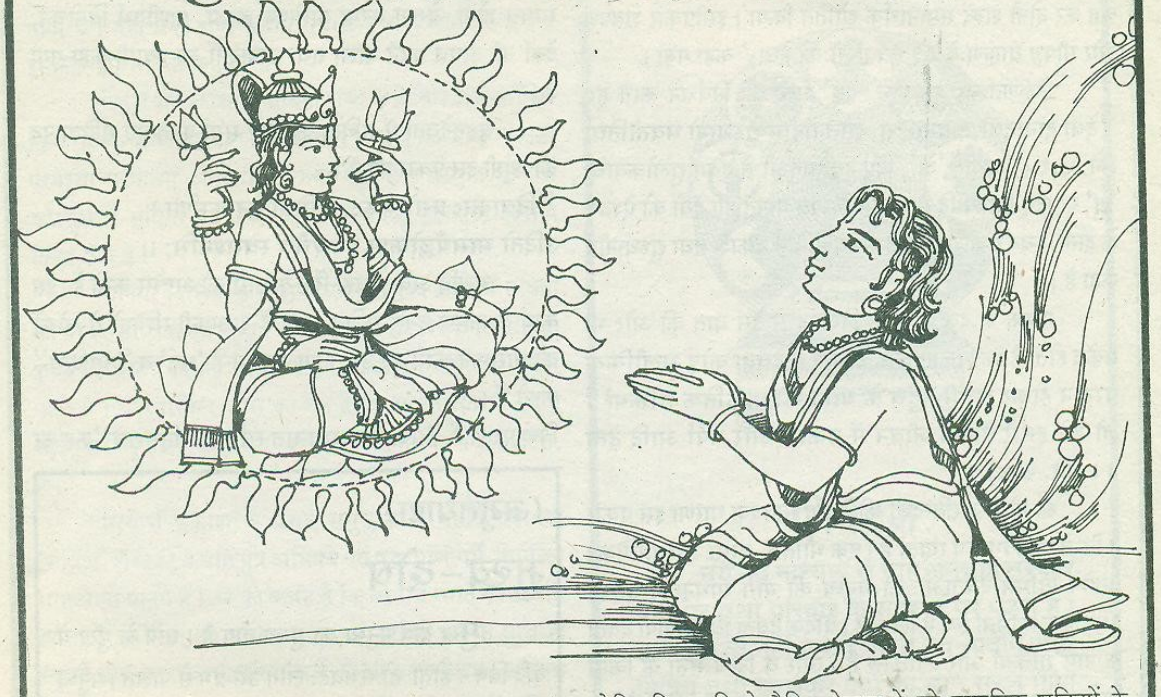

देवतावाद वेदार्थ के मूलभूत सिद्धान्तों मे से एक है। वेदमंत्रों के प्रतिपाद्य विषय का नाम देवता है और यह भी निश्चित है कि उस सर्वज्ञ द्वारा प्रदत्त मंत्रराशि रूप वेद के प्रत्येक मंत्र का कोई न कोई देवता तो अवश्य है। परन्तु मंत्रों में देवता-ज्ञान अत्यन्त तप और नहीं हो सकता है। देवता ज्ञान से ही मंत्रार्थ ज्ञान सम्भव है। अत: महर्षि शौनक आचार्य ने ठीक ही कहा है -

वेदितव्यं दैवतं हि, मंत्रे मंत्रे प्रयत्नतः।
दैवतज्ञो हि मंत्राणां, तदर्थमवगच्छति ।।

आचार्य यास्क ने निरूक्तशास्त्र में वेदमंत्रों के देवताओं अग्नि, इन्द्र, वरूणादि के अतिरिक्तत आर्यों के देवता-विषयक सिद्धान्त पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला है। आचार्य सायण, महीश्वर उष्टव आदि मध्यकालीन भाष्यकार वेद के इन देवताओं को किसी स्थान विशेष के निवासी मानते हैं जिनका कि यज्ञ में आह्वाहन किया जाता है,'उनको हवि दी जाती है जिससे ये देवता प्रसन्न होकर यजमान को मनोवांछित सिद्धि प्रदान करते हैं ऐसी इनकी धारणा है।

मैक्डानल, मैक्समूलर ए.बी.फिश, ओल्डनवर्ग आदि पाश्चात्य विद्वानों ने देवता विषयक सिद्धान्त का योरोपीय देवों एव वैदिक देवों के बीच तुलनात्मक अध्ययन करने के पश्चात् ऐतिहासिक दृष्टि से वैदिक देवताओं को प्राकृतिक शक्तियों के प्रतिरूप ठहराया है तथा उन्हे स्वर्गस्थ प्राणी विशेष माना है। उपर आधुनिक आर्ष प्रणाली के भाष्यकार महर्षि दयानन्द सरस्वती, योगी श्री अरविन्दानि देव-दिव्यगुणयुक्त, परमात्मापरक आध्यात्मिक परम एवं यौगिकादि अर्थ किया है।

स्वामी दयानन्द ने वसु रूद्र, आदित्य शब्दों को एक विशेषत्व प्रकार के एवं एक विशिष्ट संख्या वाले देवताओं के गुणों का वाचक न मान कर उन्हें इन्द्रादि देवताओं के विशेषण मान कर व्याकरिणिक व धात्वर्थ प्रक्रियानुसार यौगिक अर्थ किया। उन्होने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका ले वेद विषयक प्रकरण में शतपथ ब्रह्मणोक्त ३३ देवों की वास्तविक सत्ता को स्वीकार करके देवता अर्थात् शक्तियाँ सृष्टि के उत्पन्न करने तथा सतत क्रियाशील बनाये रखने में सहायक होती है को मान्यता दी है।

देव शब्द दिवादिगण की दिवु धातु से अच प्रत्यय करने से निष्पन्न होता है तथा देव शब्द से स्वार्थ में तल प्रत्यय करने परदेवताशब्द बनता है। देव एव देवता में कोई अर्थभेद नही है। क्यों कि यास्काचार्य निरूष्तकार ने **"यो देवः सा देवता"** कह कर यह स्पष्ट कर दिया है कि जो देव है वही देवता है। दोनों शब्दों के तादात्म्य का मूल ऋग्वेदि में एवं ब्रासणग्रन्थ में। उदाहरणार्थ - ऋग्वेद में सविता इन्द्र वरूण आदि के लिए देवता शब्द का प्रयोग

हुआ है। जबकि अग्नि आदि के लिए देवशब्द का प्रयोग सुविदित है। ऐतरेय ब्राह्मणानुसार-''**अग्निर्वै देवा: अन्या: सर्वा: देवता:**'' कह कर दोनो शब्द समानार्थक द्योतित किया। इसीप्रकार शतपथ और गौपथ ब्राह्मण में ३३ देवताओं को देवा;' कहा गया।

निरूणतकार यास्क ने 'देव' शब्द का निर्वचन करते हुए ''**देवो दानाद्वा,दीपनाद्वा, द्योतनाद्वा द्युस्थानो भवतीतिवा** (नि. ७.१५) अर्थात् 'दा', दिप् द्युत् धातुओं से एवम् द्युलोकवाची 'द्यु' या दिव् प्रातिपादि से भी इसे निष्पन्न मानते हुए देवों को ऐश्वर्य के दाता, स्वयं प्रकाशमान, तेजोमय होने से प्रकाश तथा द्युस्थानीय कहा है।

यास्क के देव शब्द के निर्वचन से इस बात की ओर भी संकेत होता है कि निरूष्टतकार की दृष्टि में **देवता कोई अलौकिक वस्तु न होकर हमारी पहुँच के बाहर की प्राकृतिक शक्तियाँ हैं जो हमें हमारे दैनिक जीवन में प्रकाश और वर्षा आदि देती है। (नि. ७.४)**

श्री योगी अरविन्दजी की देवता विषयक धारणा इस प्रकार है कि वेद द्विविध रूप रखता है। एक भौतिक-दूसरा आध्यात्मिक। उन्होने विभिन्न देवताओं को मनुष्य की योग साधना में उसकी आन्तरिक विभिन्ना रूप में लिया है। वैदिक देवता विश्वव्यापी देवता के नाम शक्तियाँ और व्यक्तित्व हैं। और वे दिव्य सत्ता के किसी विशेष सारभूत बल का प्रतिनिधित्व करती हैं। उनकी दृष्टि में वैदिक मंत्रों के शब्द किसी आध्यात्मिक तत्व के प्रतीक हैं।

स्वामी दयानन्दीय दृष्टि में 'देव' शब्द का अर्थ उपासनीय देव या परमेश्वर नहीं अपितु इसका अर्थ है दिव्यगुणों का द्योतक। अत: स्वामीजी वेदों में बहुदेव वाद का खण्डन एवं विशुद्ध एकेश्वर वाद का माण्डन करते हैं। इनके मत में पाश्चात्य विद्वानों का बहु देववाद मिथ्या एवं भ्रामक है। क्यों कि आर्य लोग सृष्टि के प्रारम्भ मे आज पर्यन्त इन्द्र वरूण रूद्र अग्नि आदि नामों की स्तुति कर में वेदोक्त प्रमाणसे एक परमेश्वर की ही उपासना करते चले आए हैं।

अत: स्पष्ट है कि अग्नि इन्द्रादि देवता वाची लगनेवाले पद उस व्यापक परमेश्वर के भिन्न-२ नाम न होकर उसके अनन्त गुणों का बखान करने वाले विशेषण गुण बोधक पद है।

वेद के सौर देवताओं में सविता का प्रमुख स्थान है। ऋग्वेद में सकल सूक्त और अनेक बिकल सूक्त तथा यजुर्वेद के साठमंत्र सविता देवता को समर्पित है। आचार्य यास्क के ''**सविता सर्वस्य प्रसविता**'' वचनानुसार सविता सबका प्रेरक, नियामक तथा स्थावर जंगम समस्त जगत् को उत्पन्न करने वाला है।

संस्कृत भाषा का प्रत्येक शब्द धातु और प्रत्यय के माध्यम से अपने ही अन्दर अपने अर्थ को समेटे रहता है। सविता शब्द भी इसका अपवाद नही हैं। पाणिनीय व्याकरण की ह्रस्वान्त व दीर्घान्त **षुञ् प्रसवैश्वर्ययो: तथा षूड:** प्रेरणार्थक धातुओं से कर्त्ता अर्थ में वृत्त प्राय होकर सविता शब्द बनता है। जिसका अर्थ है ऐश्वर्य सम्पन्न होना, प्रेरणा करना,अभिषव करना, प्राणीगर्भ विमोचन, देवों को उत्पन्न करने वाला तथा उत्पादनों का स्वामी कहा गया है।

बृहद्देवता में सविता का अर्थ सूर्या करते हुए सविता पद की व्युत्ती इस प्रकार की है। -

''**दिवाकर: प्रसोत्येक:, सविता तेन कर्मणा।**
उदितो भासयँल्लोकान् इमाश्चैव स्वराश्मभि: ।।

अर्थात् अकेले वही दिन के तारों को अग्रसर करते हैं, इस कार्य के कारण उन्हे 'सवितृ कहते हैं १ अपनी रश्मियों से लोकों को भासमान करते हुए उदित हुए अत: उन्हे 'भग' व ''आदित्व'' कहते हैं।

विष्णुपुराण में ''**प्रजानां प्रसवनात् सवितेति निगद्यते**''कह कर

प्रजाओं को उत्पन्न करने के कारण उन्हे सविता कहा है। मत्स्य पुराण मे सविता शब्द को ''सु'' स्रवण, भरणार्थक धातु से व्युत्पन्न माना है। यहाँ कहा गया है कि सूर्य से तेज विकीर्ण होता है। इसलिए इसे सविता कहते हैं।

संस्कृत शब्दकोशों से सविता शब्द के विविध अर्थ स्वीकार किये गये वाचस्पत्यम् भाग ६ में सविता शब्द का अर्थ जगत् स्रष्टा परमेश्वर परमात्मा आदिग्रहण किया गया है। संस्कृत शब्दार्थ कौस्तुभ में सविता का अर्थ-जनक उत्पादक फलदाता इत्यादि किया गया है।

मोनियर विलियम्स ने अपने संस्कृतशब्द कोश में सविता को प्रेरक, उत्तेजक एवं जीवन प्रदारक माना है। मैक्डानल सविता शब्द को प्रेरित करना, उदबुह करना, प्रचोदित करना अंगीकार करते हैं। श्री अरविन्द कोस का मत है कि सविताध्याय 'सुधातु सर्जन करना, ढीला छोड़ देना विनिगुणत करना, वेग प्रदान करना, है।

सत्यार्थ प्रकाश के प्रथम समुल्लास में महर्षि दयानन्द 'सविता' शब्दकी उत्पत्ति पुत्र अभिषवे एवं षूड: प्राणीगर्भे बिमोचने धातुओ से मानते हैं। उन का कथन है कि जो सब जगत् की उत्पत्ति करता है इस लिए उप परमेश्वर का नाम सवित इस के साथ ही स्वामी जीने इसके व्यावहारिक अर्थ को भी ग्रहण किया। **सविता और सूर्य का अटूट सम्बन्ध है। दोनो भिन्न देवता हैं। जिस प्रकार पुरूष में आत्मा तथा शरीर का सम्बन्ध है उसी प्रकार सविता सूर्य में है। सविता आत्मा है तो सूर्य उस का शरीर है।**

निष्कर्षत: धात्वर्थ के दो भाव हो सकते हैं एक भौतिकार्थ में गर्भस्थ शिशु को जन्म देना। सूक्ष्मार्थ में सब प्राणियों को प्रेरित करना दोनों अर्थ सविता देवता से सम्बधित है।

- डॉ. सहदेव शास्त्री
प्राध्यापक (संस्कृत) राजकोष कन्या महाविद्यालय उदयपुर
(राज:) ३१३००७